

ब्रह्म ज्ञान योग
संस्थान
बिसवाँ
सीतापुर



"सतसंगमाला"

केवल अध्यात्म जानने, व जिज्ञाशुओं के लिए

[1] वह कौन सी वस्तु है, जिसे प्राप्त कर लेने से :-

(i) कर्म - अकर्म बन जाता है।

(ii) अज्ञान स्वतः ही समाप्त हो जाता है, और ज्ञान प्रकट हो जाता है।

(iii) अविद्या समाप्त हो जाती है, और विद्या प्राप्त हो जाती है।

(iv) भवसागर समाप्त हो जाता है, और परमपद की प्राप्ति हो जाती है।

(v) धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

(vi) मन और माया समाप्त हो जाते हैं।

(vii) मन स्थिर प्रज्ञ होकर, एकनिष्ठ हो जाता है।

(viii) चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाता है।

(ix) विवेक प्राप्त हो जाता है।

(x) दृष्टि विवेक वाली हो जाती है सभी प्रकृतियाँ व ब्रह्माण्ड हमारे अनुरूप हो जाते हैं।

(xi) उसी वस्तु को प्राप्त करने को "अध्यात्म" कहते हैं।

(xii) उसी वस्तु को प्राप्त करने को सतसंग कहते हैं।

(xiii) उसी वस्तु को प्राप्त करने के बाद कुछ भी जानना शेष नहीं रहता है।

(xiv) उस एक वस्तु को साध लेने के बाद में, सारे ब्रह्माण्ड, सारी प्रकृतियाँ सभी लोक स्वतः ही सध जाते हैं।

एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाय ।

(xv) बेद, पुराण, उपनिषद्, गीता, रामचरित मानस सभी का सार वही वस्तु है ।

(xvi) उसी एक को साधने वाला ही साधू होता है।

साधू ऐसा चाहिए, जैसा सूप सुभाय ।

सार-सार को गहि रहे, थोथा देय उड़ाय ॥

(xvii) उसी एक वस्तु को प्राप्त करना ही हमारा धर्म है।

(xviii) जो उसे प्राप्त कर लेता है, उसे ही सद्गुरु कहते हैं, गुरुपद सतगुरु पद यही है।

(xix) इसी पद को, सत्यपुरुष, सत्यलोक, सत्यनाम भी कहते हैं

(2) केवल और केवल "सत्य" को ही जानना है:

(1) असतो मा सद् गमय :-

तुम्हारा उद्देश्य उसी सत्य को ही जानना है, तुम भ्रम बस असत्य को ही सत्य" मान कर उसे ही पकड़े बैठे हो।

(i) तीन लोक माया के है, इनको छोड़कर चौथा लोक खोजो।

(ii) पिण्ड, अण्ड, ब्रह्माण्ड के आगे चौथा लोक है उसे ही "सत्यलोक" कहते है।

(iii) जो तुम अजपा जाप और अनहद नाद की साधना कर रहे हो, अन्दर की आवाज सुन रहे हो उसी को सत्य मान रहे हो यह तुम्हारा भ्रम है। अनहद नाद की साधना तत्वों की साधना है। वह तत्वों से परे है।

(iv) वह क्रिया, कर्म, ध्यान, भजन से न्यारा है। वह ध्यानातीत, भजनातीत, योगातीत है। योग से उसे नहीं प्राप्त किया जा सकता है।

(2) सत्यनारायण की कथा मे केवल उसी "सत्य" को जानने के बारे में बताया गया है। जो हम सुनते है वह उसका महात्म है।

(3) धर्म न कौनो सत्य समाना।

"सत्य" जानने से बड़ा कोई धर्म नहीं है।

(4) सत्य, सनातन धर्म :- सत्य को जानना ही हमारा धर्म है।

(5) अष्टावक्र जी राजा जनक को उसी सत्य को जानने को बताते है।

(6) सत्य एक, बिप्र बहुधा वदन्ति :- सत्य केवल एक ही है। विद्वान लोग अलग-अलग बताते है।

[3] सत्य क्या है:-

- (i) गीता में केवल 'आत्मा' को ही सत्य बताया गया है।
- (ii) यह अद्वैत है, वहाँ पर कोई दूसरा नहीं है।
- (iii) यही परमात्मा है, इसी को अनामी कहा गया है।
- (iv) इसे ही निर्वाण पद कहा गया है।
- (v) इसे ही रामचरित मानस में "राम" कहा गया है
- (i) एक अनीह, अरूप, अनामा ।
- (ii) राम नाम कर अमित प्रभावा, बेद, पुराण, उपनिषद गावा।
- (iii) अकथ, अनादि, अखण्ड, अरुपा ।
- (iv) सुमिरत' जाहि, मिटहि अज्ञाना, सोई सर्वग्य राम भगवाना ।
- (v) सभी पुस्तकों में तीन प्रकार का दर्शन है:-
- (i) **प्रारम्भिक दर्शन** - इसमें नीति और नैतिक शिक्षा के बारे में बताया गया है चरित्र चित्रण भी किया गया है।

(ii) **मध्यदर्शन** - इसमें ब्रह्मज्ञान, सून्यवाद द्वैत के बारे में बताया गया है जैसे:- सीताराम ,राधा कृष्ण ,शंकर पार्वती इत्यादि दो हो गये, यह द्वैत है।

(ii) **उच्चदर्शन** :- इसमें केवल ईश्वरवाद है, अद्वैतवाद है यही मुख्य है। इसी को जानना है। यही सत्य है।

[4]कैसे जाने :-

"जीव" उस आत्मा से विमुख हो गया है केवल इसे आत्मा के सम्मुख होना है।

(i) सन्मुख होइ जीव मोहि जबही, जन्म कोटि अघ नाशहि तबही।

(ii) जानति तुमहि, तुमहि होई जाई ।

(iii) जैसे विवेकानन्द ने गुरु दूढ़ा था वैसे ही तुम सद्गुरु खोज लो, वह तुम्हें तुम्हारी पात्रता देख कर एक पल में सत्य के सन्मुख कर देगा और तुम वही हो जावोगे, उसी के द्वारा संचालित हो जावोगे ।

(iv) जीव अवस्था से मुक्त हो जावोगे ।

(v) उसी दिन से ध्यान, भजन, पूजा, पाठ, , क्रिया, कर्म कुछ नहीं करना पड़ेगा। सभी स्वतः ही होने लगेगा ।

आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान और तत्त्वज्ञान में अंतर

आत्मज्ञान - "निर्वाण पद"
"सतपुरुष "



ब्रह्मज्ञान

प्रकृति।
(प्रकाश)

पुरुष
(अनहदनाद)



(i) 10 इंद्रियां

(ii) 4 चतुष्टय

(iii) 5 तत्त्व

(iv) 5 तन्मात्रायें

योग=24+1 पुरुष= तत्त्वज्ञान

आत्मज्ञानः

- (1) पंच क्लेश से बचने के लिए ।
- (i) मन और माया से आशा और तृष्णा से पार होने के लिए ।
- (ii) स्व में आने के लिए ।
- (iv) अविद्या और अज्ञान से पार होने के लिए ।
- (v) जीव को मन से मुक्त कराने के लिए ।
- (vi) विवेक और विवेक वाली दृष्टि प्राप्त करने के लिए ।
- (vii) मन को काग रूप से हँस रूप बनाने के लिए ।
- (viii) मन और चित्त की तरंगे समाप्त करने के लिए ।
- (IX) मन को स्थिर प्रज्ञ बनाने के लिए।
- (x) मन स्वयं ही एकाग्र हो जाता है।
- (xi) विचारातीत और भावातीत अवस्था प्राप्त हो जाती है
- (xii) मन निर्मल, हो जाता है। अकर्म अवस्था प्राप्त होती है।
- (xiii) बिदेही अवस्था प्राप्त होती है।
- (Xiv) जीव को मोक्ष प्राप्त हो जाता है।
- (xv) जीव अवस्था से पीव अवस्था प्राप्त हो जाती है।

ब्रह्मज्ञान:-

- (i) संसार प्राप्त करने के लिए।
- (ii) मन की शक्तियाँ जाग्रत करने के लिए ।
- (iii) मन की सूक्ष्म, कारण, महाकारण शक्तियाँ जाग्रत करने के लिए
- (iv) ऋद्धियाँ और सिद्धियाँ प्राप्त करने के लिए ।
- (v) मन की मूढ, विक्षिप्त एकाग्र अवस्था प्राप्त करने के लिए।
- (vi) बिचार पाजिटिव होने लगते है।
- (vii) ब्रह्मवित्त की प्राप्ति होती है।
- (viii) मन का स्वभाव बदलने लगता है।
- (ix) साहस और उत्साह की प्राप्ति होती है।
- (x) डर समाप्त हो जाता है।
- (xi) सात लोकों का अध्यन हो जाता है।
- (xii) स्वर्ग लोक की प्राप्ति होती है।
- (xiii) इच्छा शक्ति प्रवल हो जाती है।
- (Xiv) इच्छाओं की पूर्ति होने लगती है।
- (xv) मन तुम्हारी इच्छा अनुसार रूप बना कर दिखाने लगता है।

तत्त्व ज्ञान :-

- (1) तत्त्वज्ञान में प्रकृति के 24 तत्व और एक पुरुष कुल 25 का अध्यन किया जाता है।
- (ii) ब्रह्मज्ञान में प्रकृति (प्रकाश) तथा अनहदनाद (पुरुष) के सभी सोपानों का अध्यन करके इनको पार किया जाता है।
- (iii) आत्मज्ञान में केवल एक ही "निर्वाण पद" को प्रकट कराया जाता है और इसे लखाया जाता है।
- (iv) तत्त्वज्ञान में अष्टांग योग का अध्यन किया जाता है।
- (v) पांच तत्वों का अध्यन किया जाता है। .
- (vi) इंद्रियों को वस में किया जाता है।
- (vi) मन को सम स्थित में रखा जाता है।
- (vii) यह हठ योग से संबंधित है।
- (ix) बाहर से अन्दर लौटना सिखाया जाता है।
- (x) साकार से निराकार की तरफ मार्ग है।
- (xi) तत्त्वज्ञान में तत्वों का अध्यन किया जाता है जबकि परमात्मा। सभी तत्वों के पार है।
- (xii) प्रकृतियों का अध्यन किया जाता है जबकि परमात्मा सभी प्रकृतियों, सभी ब्रह्माण्डों के पार है।
- (xiii) तत्त्व ज्ञान में जिस पुरुष का अध्यन कराया जाता है वह केवल पुरुष है। सतपुरुष नहीं है। केवल ईश्वर जैसी सत्ता है परंतु ईश्वर नहीं है।
- (Xiv) तत्त्व ज्ञान में केवल प्रकाश को ही आत्मा माना गया है जबकि असली आत्मा हम आत्मबोध द्वारा लखते हैं।
- (xv) यह क्रिया, कर्म, ज्ञान, ध्यान, समाधि का अध्यन कराता है।

"क्या है "

क्या है

- (i) अंधकार क्या है :- प्रकाश का "अभाव" ही अंधकार है ।
- (ii) अज्ञान क्या है :- ज्ञान का "अभाव" ही अज्ञान है ।
- (iii) अविद्या क्या है :- विद्या का अभाव ही अविद्या है।
- (iv) बिद्या क्या है :- निज स्वरूप का बोध होना ही विद्या है।
- (v) बोध क्या है :- अपनी "आत्मा" को लखना ही बोध है ।
- (vi) अकर्म क्या है :- जिससे हमारे अन्तः करण की शुद्धि हो ।
- (Vi) अन्तः करण की शुद्धि क्या है:- पंचकलेश (अविद्या, राग, द्वेष अस्मिता ,अभिनिवेश)समाप्त होकर, प्रेम प्रकट हो जाय ।
- (viii) भक्ती क्या है :- चित्त की एकाग्रता ही भक्ती है।
- (ix) चित्त की एकाग्रता क्या है:- जिस भी काम मे मन लगावें, मन वहीं पर स्थिर होना चाहिए ।
- (x) उपासना क्या है :- चित्त की एकाग्रता, मन स्थिर होकर अंदर प्रेम प्रकट हो जाए।

- (xi) भक्ती क्या है : - तप के द्वारा पापों का क्षय करना भक्ती है।
- (xii) पाप क्या है :- अपने "निजस्वरूप" का तिरस्कार करना सबसे बड़ा पाप है ।
- (xiii) संसार क्या है :- राग, द्वेष के चश्मे से देखा गया अनुभव संसार है।
- (xiv) भेद भक्ती क्या है:- "जीव" की दृष्टि अपने ऊपर न होकर, भ्रमवस, अपने से अन्य ईश्वर को खोजना, भेद भक्ती है।
- (xv) जीव क्या है: जो अज्ञान, अविधा द्वारा परिक्षिप्त हो गया है।
- (xvi) समर्पण क्या है:- मन सून्य, सुरत स्थिर अन्दर से नम्र, दृष्टि सारशब्द में।
- (xvii) सन्मुखता क्या है :- दृष्टि सारशब्द की ओर।
- (xviii) आत्मबोध क्या है: - सारशब्द को लखना ।
- (xix) निर्वाण क्या है: - देह से बाहर विदेही अवस्था, सारशब्द रूप ।
- (xx) सून्य क्या है:- मन
- (xxi) चौथा पद क्या है : - देह से बाहर निर्वाण पद, विदेही अवस्था

(xxii) शास्त्र और अध्यात्म में समानता क्या है: -

(i) शास्त्र वही है :- जिससे हमारी दृष्टि बदल जाय ।

(ii) अध्यात्म वही है :- जिससे हमारी दृष्टि बदल जाय ।

(xxiii) शास्त्र और अध्यात्म में असमानता क्या है:-

(i) शास्त्र से मार्ग का ज्ञान होता है

(ii) अध्यात्म से : (i) जीव को "मन और माया" से मुकती।

(ii) जीव को मोक्ष ।

(iii) मन निर्मल, हंसरूप ।

(iv) जीव अवस्था से पीव अवस्था में परिवर्तन ।

(xxiv) कहाँ, कैसी दृष्टि हो :-

(i) जगत में भोग दृष्टि :- (i) use the thing's

(ii) And Love to people's

(ii) परमात्मा में - सहज दृष्टि

(iii) व्यवहार में :- बिबेक दृष्टि

(xxv) जीव "मन और माया" द्वारा परिछिन्न कैसे है:- जैसे बादलों से कई गुना बड़ा सूर्य है, बादल कभी भी सूर्य को ढक नहीं सकते हैं। बल्कि हमारी दृष्टि को ढक लिया है। ऐसे ही केवल हमारी दृष्टि अज्ञान से ढकी हुई है ।

(xxvi) हम निजस्वरूप किस किस को मान लेते है:-

- (i) देह को
- (ii) प्राण को
- (iii) मन को
- (iv) अन्तर वाले प्रकाश को
- (v) अनहदनाद को
- (vi) बुद्धि को
- (vii) चित्त को
- (viii) अहंकार, मै को

(xxvii) निजस्वरूप का बोध कैसे करें:-

- (i) जिसमें इन्द्रियां, मन, बुद्धि का प्रयोग न हो
- (ii) किसी भी उपकरण की आवश्यकता नहीं होती है।
- (iii) साधन निरपेक्ष सत्ता है,
- (vi) निजस्वरूप को खोजना नहीं है, उसी में खो-जाना है।
- (V), पूर्ण प्रयास रहित होकर, अनन्य और पूर्ण सहज होना है।
- (vi) विदेह स्थित में, सत्य के रूप में प्रतीत करनी है।

(xxviii) हम लोग कहाँ-कहाँ फंसे हैं:-

- (i) कर्म में फंसे हैं ।
- (ii) कर्म अज्ञान का क्षेत्र है ।
- (iii) अपने स्वरूप का अज्ञान ।
- (iv) देहात्म भाव का त्याग करना है
- (v) जीवात्म भाव का त्याग करना है।

कर्म या कर्म फल :-

- (i) जितना कर्म हमारे मन पर अंकित होता है, उसी का हमें फल मिलता है।
- (ii) जिस कर्म में हमारा मन अटैच नहीं होता है, वह हमारे मन की रील पर अंकित ही नहीं होगा, कोई कर्म ही नहीं होगा, तो कोई फल भी नहीं होगा।
- (iii) कर से कर्म करौ विधि नाना, मन राखौ जहां कृपा निधाना।
- (iv) हम कोशिश करें कि कोई भी निगेटिव बात न सुने, न कहे, न देखें।
- (v) यदि कोई भी निगेटिव बात हम सुने या देखे तो उसका, चित्र हमारे मन की रील पर न बनने पाये। ऐसा तभी होगा जब हमारा मन उस समय उन बातों में लिप्त न होकर प्रभु में लिप्त हो।
- (vi) कोई भी निगेटिव बात सुनने के बाद में उसके प्रभाव को निम्न प्रकार से नष्ट कर दिया जाता है:
 - (1) यदि आपको आत्मबोध हो गया है तो तुरन्त आत्मा के सन्मुख हो जावो, वह सब नष्ट हो जायेगा।
 - (2) यदि आत्मबोध नहीं हुआ है तो सूर्य की तरफ देखकर यह सोचों कि वह सब सूर्य में जाकर भस्म हो गया है।

(3) यादे रात है तो आकाश को तरफ देख कर सोचो कि वह आकाश मे जाकर नष्ट हो गया है।

(Vii) इस प्रकार के मन पर कोई भी चित्र न बनने दो नही तो कर्म फल भोगना पड़ेगा ।

(Viii) कोई भी ऐसी बात मत सोचो जिससे मन पर दबाव पड़े या खिंचाव पड़ें। दबाव पड़ने के गरीबी आती है और खिंचाव पडने से बीमारी आती है।

(ix) जो हमारे प्रसन्नता की बात, लाभ की बात हो, उसका चित्र बनने दो उससे तुम्हारा संसार बनेगा अपने संसार के रचना करने वाले तुम और तुम्हारा मन है।

(X) जो जो भी हम मन में सोचेंगे, वह कर्म बन जायेगा उसका फल हमें भोगना पड़ेगा। जैसे यदि हम किसी का मारने की बात मन में सोचे और उसको मारे भी नहीं फिर भी वह मन की रील पर अंकित हो गया और कर्म बन गया ऐसे कर्मों से हमे बचना है।

(Xi) इन्द्रियों द्वारा चाहे जितनी भी पूजा कर लो, वह कर्म नही बनेगा, हमारे मन की रील पर अंकित नहीं होगा और उसका कोई फल हमको नही मिलेगा।

(Xii) अनन्य होने का अर्थ है कि हम माया बद्ध एरिया में न हो, चाहे वह सात्विक हो, चाहे राजस हो , चाहे तामस हो, चाहे देवता हों, चाहे मनुष्य हो, चाहे राक्षस हो। इन तीन गुणों से संबधित चाहे कोई मनुष्य हो, चाहे कोई सामान हो, हम इनमें लिप्त न हो।

(Xiii) जिसको एक बार परमात्मा की प्राप्ति हो गयी या भगवत प्राप्ति हो गयी, फिर यदि तुम परमात्मा को हटाना भी चाहो तो कभी भी नहीं हटेगा। तुम्हारा कोई उपाय हटाने में नहीं चलेगा, क्योंकि सभी इन्द्रियाँ और मन परमात्मा द्वारा संचालित हो जाते हैं।

(Xiv) कोई भी साधना ऐसी नहीं है जिसके बल पर हम उस परमात्मा को प्राप्त कर सके, वह साधन हीन, बलहीन को ही मिलते हैं।

यहि कलिकाल न साधन दूजा ,योग,यज्ञ,जप ,तप नहि पूजा।
कलियुग यज्ञ,योग नहि ज्ञाना,विविध कर्म मत फसों सुजाना।
कलि नहि कर्म, ज्ञान नहि पूजा, सहज,अनन्य,समर्पण दूजा।।

(XV) परमात्मा प्राप्ति के बाद तुम्हारी इन्द्रियाँ और मन, संसार में रहते हुए भी ऐसे रहेंगे जैसे कमल के पत्ते पर पानी की बूंद, इसलिए पहले परमात्मा को प्राप्त करो, फिर संसार में कर्म करो ।

जीव को सदगुरु की चेतावनी:-

लख चौरासी भोग के तूने, यह मानव तनपाया ।
रहा भटकता माया ही मे, प्रभु को ढूँढ न पाया ।

वेद, शास्त्र, गीता सभी का सार क्या है:-

वेद, शास्त्र, गीता पढ़ी, सबका यही निचोड़ ।
केवल आत्म जानिकर, बाकी सब कुछ छोड़ ॥

आत्मा को जानने के बाद कुछ भी करना नहीं पड़ता है:-

ध्यान, भजन, जप छोड़ि के, केवल आत्म जान ।
कछू न करना शेष रहै , यही है पद निर्वाण ॥

क्या मंत्रों के जप से, समाधि से, ध्यान, भजन से आत्मज्ञान होता है:-

गायत्री और मन्त्र सब, लोक सात लौ जान ।
इन्द्रिय, मन और योग सब, यह माया पद जान ॥

जीव का लक्ष्य मायापद से निकलकर, आत्मा को जानना ही है:-

माया पद सब छोड़कर, आत्मपद को जान ।
केवल इसी को जानना, यही लक्ष्य है मान ॥

दर्शनशास्त्र में, सांख्ययोग से क्या आत्मा को जाना जा सकता है:-

दर्शन शास्त्र से जानिए, सांख्य योग का ज्ञान ।
केवल इसी को जानकर, आत्म को पहिचान ॥

सांख्य योग के दो भाग :-

सांख्य योग दो भाग में, ईश्वरवादी जान ।
अनीश्वरवादी सांख्य को, माया पद ही मान ॥

ईश्वरवादी सांख्ययोगः

दर्शन शास्त्र में मुख्य है, सांख्य योग का ज्ञान ।
ईश्वरवादी सांख्य से, आत्म को पहिचान ॥

अनीश्वरवादी सांख्ययोगः -

ईश्वर जैसी सत्ता है, ईश्वर नहीं है जान।
अनीश्वरवादी सांख्य है, ब्रह्म ज्ञान यह मान ॥

सद्गुरु की पहचान क्या है:-

वाणी, वचन, से परखिये, सद्गुरु केरी हाट ।
लोक, प्रकृति सब छोड़कर, आत्मपद की बात ॥

सद्गुरु क्या सिखाता है:-

पूर्ण सहजता, पूर्ण समर्पण, हो अनन्य, सन्मुखता जान।
पूर्ण प्रयास रहित होकर के, आत्मघट को तू पहिचान

ईश्वरवादी सांख्ययोग:

दर्शन शास्त्र में मुख्य है, सांख्य योग का ज्ञान ।
ईश्वरवादी सांख्य से, आत्म को पहिचान ॥

अनीश्वरवादी सांख्ययोग: -

ईश्वर जैसी सत्ता है, ईश्वर नहीं है जान।
अनीश्वरवादी सांख्य है, ब्रह्म ज्ञान यह मान ॥

सद्गुरु की पहचान क्या है:-

वाणी, वचन, से परखिये, सद्गुरु केरी हाट ।
लोक, प्रकृति सब छोड़कर, आत्मपद की बात ॥

सद्गुरु क्या सिखाता है:-

पूर्ण सहजता, पूर्ण समर्पण, हो अनन्य, सन्मुखता जान।
पूर्ण प्रयास रहित होकर के, आत्मघट को तू पहिचान ॥

सद्गुरु क्या छुड़ाता है:-

अनहद नाद, ध्यान और अजपा,
सुमिरन, जाप सभी को छोड़।
मन, माया और द्वैत को छोड़ो,
आत्म पद से नाता जोड़ ॥

सद्गुरु क्या बताता है:-

केवल अद्वैत को जानना, सबसे बड़ा है मर्म।
यहीं सत्यपद, आत्मपद, सत्य, सनातन धर्म ॥

सभी शास्त्रों में जिस एक चीज को मानव कल्याण के लिए सबसे जरूरी बताया गया है वह एकमात्र "आत्मा" की "भक्ति" ही है।

यह भक्ति तीन चरणों में होती है:-

प्रथम चरण मे:- आत्मा को प्रकट कराना पड़ता है यह सद्गुरु कराता है।

सब घट मेरो साइयां , खाली घट न कोय।

बलिहारी वा घट की , जा घट प्रकट होय।।

दूसरे चरण में:-आत्मा के सम्मुख होना पड़ता है।

सम्मुख होने पर:-

1. मन निर्मल हो जाता है।
2. मन आत्मा को समर्पित हो जाता है।
3. मन आत्मा द्वारा संचालित हो जाता है।
4. जीव को मन से मुक्ति मिल जाती है।
5. जीव मन से मुक्त होते ही आत्मा से मिलकर जीवअवस्था से पीव अवस्था में आ जाता है।
6. मन ही भवसागर है भवसागर पार हो जाता है।
7. चौरासी पार होकर जीव तर जाता है।
8. मन तुम्हारा मित्र बन जाता है मन के संचालक तुम बन जाते हो।
9. मन अज्ञानी से ज्ञानी विवेकी , हंस , परमहंस बन जाता है।

10. जीव माया के तीन लोको को पार करके चौथे लोक या चौथे पद या पिंड ,अंड ,ब्रह्मांड के पार पहुंच जाता है।
11. चित्त की व्रत्तियों का निरोध हो जाता है।
12. पूर्ण अवस्था,परमपद अवस्था,हरिपद अवस्था,मोक्ष अवस्था प्राप्त हो जाती है।
13. विवेक वाली दृष्टि प्राप्त हो जाती है।
14. तदात्म से एकात्म अवस्था प्राप्त हो जाती है।
15. स्थिर प्रज्ञा अवस्था प्राप्त हो जाती है।
16. सत्य प्रकट होने पर , जैसे सूर्य के प्रकट होने पर अंधेरा नष्ट हो जाता है वैसे ही असत्य स्वयं ही नष्ट हो जाता है।

तीसरे चरण में:- (I) हम परम सूक्ष्मतम् एनर्जी से जुड़ जाते हैं और वैसे ही हो जाते हैं।

जानति तुमहि,तुमहि होइ जाई।

(II) तीनों लोक की जो भी वस्तु चाहते हो उसका स्थूल रूप इस एनर्जी में कर दो वह वस्तु तुम्हें प्राप्त हो जाएगी।

(III) तीनों लोक का संचालन इसी एनर्जी से होता है।

आत्मा की भक्ति की आवश्यकता:-

1. केवल यही भक्ति अध्यात्मिक है शेष सभी धार्मिक हैं।
2. हम परम सूक्ष्मतम एनर्जी से जुड़ जाते हैं तथा उसी के द्वारा संचालित होने लगते हैं।
3. मन,माया,आशा,तृष्णा समाप्त हो जाते हैं।
4. तीन लोक माया के हैं इन से पार हो जाते हैं।
5. मन काग रूप से हंस रूप हो जाता है ।
6. इंद्रियां विवेकी तथा दृष्टि विवेक वाली प्राप्त हो जाती है।
7. हम जीव अवस्था से पीव अवस्था में आ जाते है।
8. भवसागर यह मन ही है हम भवसागर तथा चौरासी से पार हो जाते हैं।
9. परमानंद,परमशांति,परमपद,पूर्णपद,गुरुपद,गोविंद पद सब हमें प्राप्त हो जाते है।

10. प्रकृति के नियमों से तथा प्रकृति से, ब्रह्मांडों से पार हो जाते हैं।
11. तीन तापों का असर नहीं होता है।
12. कैवल्य मुक्ती प्राप्त हो जाती हैं।
13. सभी शरीरों से पार हो जाते हैं।
14. निज स्वरूप में स्थित हो जाते हैं।
15. स्वभाव में परिवर्तन हो जाता है।
16. सत्य प्रकट हो जाता है असत्य नष्ट हो जाता है।
17. हमें विचारातीत और भावातीत नहीं होना पड़ता है स्वतः ही हमें विचारातीत और भावातीत अवस्था प्राप्त हो जाती है।
18. अज्ञानी से ज्ञानी अवस्था प्राप्त हो जाती है।
19. हम परमात्मा से एक हो जाते हैं।
20. मनुष्य के सभी उद्देश्यों की पूर्ति होने लगती है।

आत्मा की भक्ति में:- (I) इंद्रियों का,मन का,सुरत का किसी भी शरीर जैसे - स्थूल शरीर,सूक्ष्म शरीर,कारण शरीर,महाकारण शरीर इत्यादि का प्रयोग नहीं किया जाता है।

(II) ध्यान,अनहदनाद,क्रिया,कर्म इत्यादि का प्रयोग नहीं किया जाता है।

(III) कोई भी जाप,अजपा इत्यादि का प्रयोग नहीं किया जाता है।

आत्मा की भक्ति से हमारे में क्या परिवर्तन होता है:-

- हम जीव अवस्था से पीव अवस्था में आ जाते हैं।
- हम तन घट से आत्म घट में आ जाते हैं।
- जो हम मन द्वारा संचालित थे , वह मन से मुक्त होकर आत्मा द्वारा संचालित हो जाते हैं।
- जीव,मन से मुक्त हो जाता है इसी को मुक्ती कहते हैं।
- मन ही काल है हम काल के देश से आत्मा के दयाल देश में पहुंच जाते हैं।
- मन ही भवसागर है,हम भवसागर से पार हो जाते हैं।

"विद्या"

विद्या क्या है:- केवल और केवल "आत्मा को जानना" ही विद्या है। इसे ही "आत्मबोध" कहते हैं।

विद्या जानने के लिए क्या करना है:- केवल चार का ही अध्ययन करना है।

- (i) जीव
- (ii) मन
- (iii) सुरत
- (iv) आत्मा

[1] जीव का उद्देश्य :-

- (i) आत्मा को जानना
- (ii) मन से मुक्त होना
- (iii) सुरत की धार मोंड कर आत्मघट के सम्मुख कर देना है

जीव को करना क्या है:-

- (i) अविद्या से निकलकर विद्या को जानना है।
- (ii) अबोध से निकलकर "बोध" को जानना है।
- (iii) परवस से निकलकर "स्ववस" में आना है।
परवस जीव, स्ववस भगवन्ता ।

- (iv) मन के साथ से निकलकर "आत्मा" के साथ होना है।
- (v) मन से मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त करना है।
- (vi) अपनी "स्व" में ही रहना है।
- (vii) सभी मिथ्या और असत्य पदों को छोड़कर सत्यपद को ही जानना है।
- (viii) सभी मिथ्या और असत्य लोकों का छोड़कर "सत्यलोक" को ही जानना है।
- (ix) सभी मिथ्या और असत्य नामों को छोड़कर सत्यनाम "को ही जानना है।
- (x) अलख निरंजन को छोड़ कर केवल अलग को ही लखना है।
- (xi) तनघट और मनघट छोड़कर आत्मघट को ही जानना है।
- (xii) सभी स्वरूपों को छोड़कर निजस्वरूप को लखना है।
- (xii) द्वैत से निकलकर अद्वैत में आना है।
- (xiv) प्रकृति और पुरुष से निकलकर "सत्यपुरुष" को जानना है।
- (xv) पांच तत्वों की साधना न करके, परम तत्व के सम्मुख होना है।
- (xvi) अनन्य और सहज होना है।

मन :

- (i) मन शरीर मे एक यन्त्र की तरह काम करता है।
- (ii) मन जड़ है।
- (iii) जैसे चन्द्रमा है ऐसे ही हमारा मन है।
- (iv) मन की गति प्रकाश की गति से तेज है अतः मन प्रकाश रूप मे दिखायी देता है।
- (V) सात रंग के प्रकाश के अलग, अलग मंडल है। इन्हें ही साबित्री कहा गया है, तथा इन्हें ही सात स्वर्ग भी कहा गया है
- (vi) मन और सुरत दोनो जड़ है, जब कि चेतन केवल जीव और आत्मा ही है। शेष सब कुछ जड़ ही है ।
- (Vii) मन की बहुत ही तेज गति होती है
- (Viii) मन से तरंगें निकलती है जिन्हें विचार कहते है।
- (ix) मन ही कर्ता है और जो करता है उसे कर्म कहते है यह मन की रील पर अंकित होते रहते है।
- (x) मन ही जीव को अपने वस मे किये हुए है, और कर्म कराता रहता है, इसी कर्मों के आधार पर अगला जीवन मिलता है।
- (xi) यही भव सागर और चौरासी है।
- (xii) यह जहाँ पर जाता है उसी का रूप हो जाता है।
- (xiii) यह काग रूप में, अज्ञान रूप मे, अविद्या के रूप मे होता है।

मनका स्वभाव:- दुःखी, चिन्ता, भय, अशान्त, भवसागर कालरूप, अविद्या, काग रूप, असंतुष्ट, अज्ञानी है।

विद्या जानेन से या आत्मबोध होने से मन मे क्या परिवर्तन होता है:-

(i) मन सम स्थित में बद रहता है इसे ही स्थिर प्रज्ञ अवस्था कहते है।

(ii) मन की गति समाप्त हो जाती है।

(iii) मन की तरंगें समाप्त हो जाती है।

(IV) मन विचारातीत और भावातीत अवस्था मे आ जाता है।

(v) मन अकर्ता हो जाता है

(vi) मन हँस रूप हो जाता है।

(vii) मन जीव के बस मे हो जाता है।

(Viii) मन,विवेकी और ज्ञानी हो जाता है। विवेक वाली दृष्टि प्राप्त हो जाती है।

(ix) मन की रील पर अंकित पिछले कर्म समाप्त हो जाते है और नये कर्म नहीं अंकित होते है

(x) दैहिक दैविक और भौतिक तापों का असर नहीं होता है ।

सुरत को क्या करना है या क्या परिवर्तन होना है:-

(I) सुरत को स्थिर होना है

(ii) सुरत को सार शब्द में समाना है। समाने के बाद मे सुरत पारस सुरत हो जाती है ।

"पारस सुरत संत के पासा ।"

(iii) पारस सुरत जिसको भी सुरत से छू देगी, अपने समान बना लेगी।

(iv) संसार की जो भी वस्तु चाहते हो उसका स्थूल रूप बनाकर इसी सुरत में कर दो।

(v) तुम्हारा जो भी काम हो उसमे पारस सुरत को लगाओ।

(vi) जाकी सुरत लगी है जहवाँ, सो प्राणी पहुंचेगा तहवाँ '

संसार का नियम:-

सारा संसार - देवताओं के अधीन है।

सारे देवता - मन्त्रों के अधीन है।

सारे मंत्र - मन के अधीन है।

सारे मन - आत्मा के अधीन है।

जड़ और चेतन :-

केवल जीव" और "आत्मा" ही चेतन है।

शेष सभी जड़ हैं ।

अतः हमारा मन भी जड़ है।

चेतन जीव ,भक्ती जड़ की करें,या चेतन की:-

(1) चेतन जीव के लिए, केवल चेतन आत्मा की ही भक्ती करने योग्य है।

(2) जो जिस तत्व की भक्ती करता है,उसका अगला जन्म उसी से संबंधित होता है।

भक्त सद्गुरु से कहता है :

(1) तनदुरुस्ती, मनदुरुस्ती, धनदुरुस्ती हो ।

(ii) धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष भी हो ।

सद्गुरु क्या करता है:-

सद्गुरु वही कहावे , दो अक्षर का भेद बतावै ।
एक छुडावै एक लखावै, तव प्राणी निज घर को जावै ॥

दो अक्षर का भेद:-

(1) मन और माया को छोड़ना है।

(ii) आत्मा को लखना है।

वस्तु एक नाम अनेक : -

इसी आत्मा की महिमा अनेक नामों से गायी गयी है इसी आत्मा को, राम, नाम, प्रभू, परमात्मा, परमपद, हरिपद, चौथापद, चौथालोक, सतगुरु, गुरु, गोविन्द, निःअक्षर, विदेही, आत्मघट, मोक्षपद, किलिया, धुरी, आधार, अलख, अकह, अनामी, निर्वाण परमधार हंस, सत्यपद, अद्वैत, राधास्वामी इत्यादि नामों से बताया गया है।

मन और माया का मत :-

सभी मते संसार के, सभी काल के जान ।
सत्य, सनातन, आत्मा, यह दयाल पहिचान ॥

मन के मते न चालिए, मन के मते अनेक ।
जो मन पर असवार है, सो साधो कोई एक ॥

भेद,मन द्वारा संचालित और आत्मा द्वारा संचालित मे:-

मन चेती नहि होत है, प्रभु चेती तत्काल ।

पहिचान माया :-

गो,गोचर जंह लगि मन जाई,सो सब माया जानेव भाई

भक्त की पुकार प्रभू या आत्मा या राधास्वामी से:-

(1)

तन निरोगी रहे , धन भी भरपूर हो ।
मन प्रभू में रहे , ऐसा दस्तूर हो ।
भ्रांति मन से मिटे, मन समर्पित भी हो ।
मन से मुक्ती मिले, जीव को, मोक्ष हो ।

(2)

सत्यपद भी मिले , काग से हंस हो ।
चौथा पद भी मिले, वह परमपद भी हो ।
द्वार दसवां खुले, और प्रकट धार हो ।
राधा स्वामी मिले, पद भी निर्वाण हो ।

(3)

नाम ऐसा मिले , वह निः अक्षर भी हो ।
लोक चौथा मिले , वह अचल पद भी हो ।
वही किलिया, धुरी, सब का आधार हो ।
सतगुरु जो मिले, वह परमधार हो ।

(4)

राम जिसको कहें, वह विदेहीं भी हो ।
जो अवस्था मिले , जीव से पीव हो ।
आत्मघट भी मिले, बोध आत्म का हो ।
सर्व व्यापक वही , सर्व न्यारा भी हो ।

पहिचान, गुरु और सदगुरु की:-

(1) गुरु :-

अनहद नाद का योग है, यह है द्वैत का ज्ञान ।
यह मन की ही साधना, 'गुरु' का है यह ज्ञान ॥

अजपा, जाप, नूर सब मनके,
इन सब को तू माया जान ।
अन्दर, बाहर, ध्यान धरावै,
इन सब को तू गुरु ही जान ॥

(2) सदगुरु :-

चौथा पद, अद्वैतपद , पूर्ण वही पद जान ।
सत्य यही पद, मोक्षपद, यही है पद निर्वाण ॥
आत्मपद भी यही है, अलख पही पद जान ।
इसको जो लखवाय दे, वही सदगुरु सुजान ॥

"पहिचान- राधास्वामी"

अरे तू कर उसकी पहिचान ।

सब का मालिक एक वही है, उसी एक को पहले जान ।
वही राम है, वही नाम है, वहीं है सत गुरु और सतनाम ।
वही विदेही, वही आत्मपद, वही है पूर्ण पद, निर्वाण ।
वहीं गुरु है, वहीं मोक्ष पद, वही अचलपद उसको जान ।
राधास्वामी उसी को कहते, केवल उसको ही तू जान ।
बन्दी छोर निः अक्षर है वह, वही परमपद उसको जान ।

(2)

चक्र, द्वार नौ, प्रकृति को छोड़ो, लोक, ब्रह्माण्ड सब मिथ्या जान ।
पाँच तत्व के परे मुक्त पद, किलिया, घुरी वही है जान ।
अनहद नाद, नूर को छोड़ो, इन सब को तू माया जान ।
जाप, अजाप, ध्यान सब मन के, मन ही काल है, छोड़ो, जान ।
अण्ड, पिंड, ब्रह्माण्ड को छोड़ो, तीन लोक है माया आन ।
तीन लोक क्यों भटक रहा है, भ्रम वस होकर तू नादान ।
तीन लोक तो माया के है, इनका मालिक काल को जान ।
चौथे लोक को खोजो पहले, दसवाँ द्वार वही है जान ।

(3)

नौ द्वारे संसार के समझो , दसवाँ द्वार से उसको जान।
द्वैत छोड़ि अद्वैत को पकड़ो,द्वैत लोक है माया जान।
तनघट छोड़ो,मनघट छोड़ो,केवल आतमघट पहिचान।
न यह अन्दर,न यह बाहर,सदगुरु खोजो,लो पहिचान।
न यह गुप्त , नही यह प्रकट,भागीरथी धार है जान।
व्यापक सर्व,सर्व से न्यारा,सबसे अलग वही है जान।
सुरत, निरत,मन है वहाँ नाही,एक अकेला वही है जान।
जीव अवस्था में क्यों भटके ,पीव अवस्था को तू जान।
यही अवस्था सबसे ऊपर,सतगुरु पद है, इसको जान।
इसे जानि कुछ शेष न रहता,सबको छोड़ इसी को जान।

(4)

हो अनन्य तुम खोजो उसको सहज समर्पण से पहिचान अभी
विमुख हो,हो जावो सन्मुख,भेद गुरु से उसका जान
है सन्मुख पर दीखत नाही,गुरु से मिलकर लो पहचान।
उसको जानि वहीं ही जावो, तुम हो वही,स्वयं को जानि।
राधास्वामी स्वयं तुम्ही हो,खुद से खुद को लो पहिचान।
धार शब्द की प्रकट हो रही,आतम घट मे उसको जान।
राधास्वामी यही धार है ,यही नाम है इसको जान।
पूर्ण सहज हो,सुरत हो स्थिर,सन्मुख होकर लो पहचान।

राधास्वामी मत का नामदान :-

नाम केवल चौथे लोक में ही है, तीन लोक में नाम है ही नहीं, तो नाम का दान कैसा ।

- (I) नाम रहे चौथे पद माही, तुम दूढौ त्रिलोकी माही।
- (II) तीन छोडि चौथा पद दीन्हा, सत्यनाम सतगुरू गति चीन्हा
- (III) कलि केवल एक नाम अधारा, वेद, पुराण, सन्तमत सारा ।
- (IV) कोटि नाम संसार के, ताते मुक्ति न होय ।

आदि नाम जेहि गुप्त जप, बूझै बिरला कोय ॥

- (V) राधास्वामी, अण्ड, पिंड, ब्रह्माण्ड के पार चौथा पद है
उसी को सद्गुरू प्रकट कराता है। जीव को बोध कराता है।

राधास्वामी मत के नामदान की विशेषताएँ :-

(1) सद्गुरु, जीव को नामदान देते हैं उसी समय जीव को राधास्वामी धाम में पहुँचा दिया जाता है। जीव, आत्मा से मिलकर एक हो जाता है।

(2) नामदान प्राप्त होने के बाद से कोई भी साधना, पूजा, ध्यान, अनहद नाद योग, अजपा जाप इत्यादि कोई भी नहीं किया जाता है, क्योंकि यह साधनाएँ मन की ही हैं, तीन लोक की ही हैं। तीन लोक माया के हैं। अतः इन्हें छोड़ दिया जाता है। तीन लोक काल के हैं। मन ही काल है। यह सभी साधनाएँ तत्त्वों की हैं।

(3) राधा स्वामी मत में अद्वैत की साधना है वहाँ दो नहीं हैं, आत्मा से आत्मा की भक्ती है। अनहद नाद योग में दो हो गये अतः द्वैत है इसलिए इसे छोड़ा जाता है।

(4) कोई कंठी, माला, कपड़े, दाढ़ी, जटा इत्यादि कुछ भी दिखावा वाला काम नहीं होता है।

(5) राधास्वामी मत में किसी की भी जय नहीं बोली जाती है, क्योंकि जय द्वैत है, यदि किसी की जय हुई तो उसके विपरीत किसी की क्षय स्वतः होगी।

जैसे:-

यदि राम की जय तो रावण की क्षय इत्यादि।

चौथे पद की मुख्य विशेषतायें:-

- (i) जो भी इसके सामने आता है, इसी के जैसा होने लगता है।
- (ii) केवल यही सत्य है, शेष सब मिथ्या है।
- (iii) सभी का आधार नहीं है।
- (IV) चौथा पद केवल मनुष्यों में ही प्रकट हो सकता है।
- (v) जब तक प्रकट नहीं होता है, तब तक हर जगह होते हुए भी कोई परिवर्तन नहीं कर सकता है। जब कि स्वर्ग और नर्क में हर जगह समान रूप से व्याप्त है।
- (Vi) प्रकट होते ही पूर्ण परिवर्तन स्वतः होने लगता है।
- (vii) अपने समान बना लेता है।
- (viii) आप उसी "परमपद" में "हरिपद" में पहुँच जाते हैं।

चेतावनी :-

बिना बोध के भाखै ज्ञान, बोध होकर धरै ध्यान।
ज्ञानी होकर सुमिरै जग, कहै दयाल यह तीनों ठग॥

वैराग्य क्या है:

अन्तः जगत और बाह्य जगत, दोनों से द्रष्टि को मोड़।
केवल आत्म बोध से ,खुद से खुद को जोड़ ॥

क्या पिंड, अँड , ब्रह्माण्ड की रचना नकली है:-

आदि माया कीन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिंड दिखायी।
अविगत रचना रची अंड माही, ताका प्रतिबिम्ब डारा है ॥

शब्द विहंगम चाल हमारी,
कहे कबीर स तगुरु दर्ई तारी।
खुले कपाट शब्द झनकारी,
पिंड, अँड के पार सो देश हमारा है ।

चौथा पद:-

यही सभी के परे है, मूलयही है ज्ञान ।
सार सभी का यही है, यही है पद निर्वाण ॥
राधास्वामी यही है, यही अवस्था पीव ।
भवसागर के पार है, सभी मुक्त हो जीव ॥
निजस्वरूप, निजनाम है, मुक्त तत्व है जान।
राम, नाम, भी यही है, यही है आत्मज्ञान ॥
केवल यही तो सत्य है, बाकी सभी असार।
यही अचलपद, रामपद, सभी पदो का सार ॥

सुरेशादयाल

ब्रह्म ज्ञान योग संस्थान

मोचकलॉ बिसवाँ सीतापुर उ. प्र.

सम्पर्क सत्र-9984257903